eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

कबीरदास का समाजदर्शनः एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

[1]डॉ0 अजय कुमार वर्मा
[1]असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, श्रीगांधी महाविद्यालय, सिधौली, सीतापुर उ0प्र0

Received: 17 Dec 2023, Accepted: 15 January 2024, Published online: 01 February 2024

Abstract

कबीरदास जी एक महान संत कवि, समाज सुधारक थे। वे सारे जहां में सुधार लाना चाहते थे, कबीरदास जी सिर से पैर तक मस्त–मौला थे, स्वभाव से फक्कड़ आदत से अक्कड़, भक्त के सामने निरीह, भेषधारी के आगे प्रचंड, दिल के साफ, दिमाग के दुरुस्त, भीतर से कोमल, बाहर से कठोर, जन्म से अछूत, कर्म से वंदनीय थे। कबीरदास जी ने सामाजिक विरोध को समाप्त करके आपसी सहयोग एवं प्रेम भाव और मानवतावादी विचारों की धारा को प्रवाहित किया है। उन्होने अपने कविताओं एवं दोहों से समाज में फैली कुरीतियों तथा कुविचारों का जोरदार खंडन किया। कबीरदास जी जीवन को समानता के आधार पर देखते थे। वह राम रहीम के नाम पर चल रहे भेद–भाव तथा उनके बीच कुरीतियों को समाप्त करने का प्रयास किया। कबीरदासजी समाज सुधारक के साथ ही एक क्रांतिकारी भी थे, जिन्होंने निडर भावना से समाज में चल रहे कुरीतियों एवं वैमनस्य के खिलाफ अपने विचार व्यक्त किया। कबीरदास जी समाज को प्रेम की धारा तथा एक नई दिशा देने का प्रयास किया।वह समाज तथा धर्म के नाम पर व्याप्त पाखंड, अंधविश्वास, हिंसा व पशुबलि, मूर्ति– पूजा आदि का विरोध किया। कबीरदासजी ने मानव को परिश्रम, ज्ञान व कर्म को ही महान बताया। वह अपने युग के महान दार्शनिक थे। उनके लिखे दोहा आज के आधुनिक युग में भी प्रासंगिक हैं। संतकबीरदासजी कासंपूर्ण साहित्य समाज को एक सही पथ दिखाकर उस पर चलने की प्रेरणा देता है।

बीजशब्द– निर्गुणवाद, सगुणवाद, संप्रदायवाद, प्रगतिशील चेतना, धर्माडंबर।

Introduction

हिंदी साहित्य के इतिहास का द्वितीय चरण भक्तिकाल के नाम से जाना जाता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने वि.संवत. 1375 से 1700 तक के काल खंड को सामान्यतः दो भागों में विभक्त किया गया है निर्गुणधारा एवं सगुणधारा। निर्गुणधारा के अंतर्गत – ज्ञानाश्रयी शाखा एवं प्रेमाश्रयी शाखा। सगुणधारा के अंतर्गत रामकाव्य एवं कृष्णकाव्य है। ज्ञानाश्रयी शाखा के कवियों को संत, कवि कहा जाता है। कबीर इस शाखा के प्रतिनिधि कवि हैं। कबीरदास ऐसे कवि हुए जो संत, भक्त, समाजसुधारक और फकीर थे। उनके जैसा आजतक न कोई हुआ है और न ही शायद होगा। कबीर का प्रार्दुभाव ऐसे समय में हुआ, जब समाज अनेक बुराइयों से ग्रस्त था। छुआछूत, अंधविश्वास, रूढ़िवादिता, मिथ्याचार, पाखंड का बोलबाला था। धार्मिक पाखंड अपनी चरम सीमा पर था और धर्म के ठेकेदार स्वार्थ की रोटियां धार्मिक उन्माद के चूल्हे पर सेंक रहे थे। धार्मिक कट्टरता और संकीर्णता के कारण समाज का संतुलन बिगड़ रहा था। कुरीतियों और कुप्रथाओं का बोलबाला था, सामाजिक

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

विषमता बढ़ती जा रही थी। उस समय किसी ऐसे महात्मा या समाजसुधारक की आवश्यकता थी, जो समाज में व्याप्त इन बुराइयों पर निर्भीकता से प्रहार कर सके। दोनों धर्मों के अनुयायियों को बिना किसी भेदभाव के फटकार सके और सदाचरण का उपदेश देकर सामाजिक समरसता की स्थापना करे। कबीरदास समाजसुधारक के साथ ही हिंदी साहित्य के एक महान समाज कवि थे। उन्होंने अनोखे सत्य के माध्यम से समाज का मार्गदर्शन तथा कल्याण किया। जिससे मानव कुसंगति, छल–कपट, निंदा, अहंकार, जाति–भेदभाव, धार्मिक–पाखंड आदि को छोड़कर एक सच्चा मानव बन सकता है। उन्होंने समाज में चल रहे अंधविश्वासों, रूढ़ियों पर करारा प्रहार किया। कबीर शांतिमय जीवन व्यतीत करते थे और वह अहिंसा, सत्य, सदाचार आदि को अपने जीवन में अपनायाऔर दूसरों को भी यही सीख देते थे। उनका स्वभाव क्रांतिकारी प्रवृत्ति होने के कारण उन्होंने ऊंच–नीच तथा समाज में जाति–पांति के भेद भाव का विरोध किया। उस समय समाज में हिंदूओं के मन–मस्तिष्क पर मुस्लिम आतंक का डर फैला हुआ था। उन्होंने ऐसा मार्ग अपनाया जिससे समाज में फैली बुराइयों को दूर किया जा सके। कबीर ने अपना सारा जीवन तथा साहित्य के आधार पर मानवजाति को एक अच्छा संदेश दिया जिस संदेश को हमें अपने जीवन में अपनाना चाहिए। उनके साहित्य में समाजसुधार की भावना है। कबीरदास जी का जन्म 1398 में माना जाता है। उनका जन्म और माता–पिता को लेकर बहुत विवाद है, लेकिन यह स्पष्ट है कि कबीर जुलाहा थे। उन्होंने अपनी कविता में इस बात का जिक्र कई बार किया है। कबीर अपनी ब्रह्म को निर्गुण और सगुण से परे मानते थे। उनका कहना था कि –" हम निर्गुण तुम सर्वगुण जाना"।

इस प्रकार वे स्वयं को सगुणोपासना की पद्धति से अलग कर लेते हैं। उनका ब्रह्म न तो वेदग्रंथ लिखित ईश्वर है और न कुरान लिखित अल्लाह या खुदा। कबीरदास स्वयं पढ़ना लिखना नहीं जानते थे, वह निरक्षर थे, फि भी वे महान दार्शनिक थे। उनका कहना है कि–"मसि कागद छुयौ नाही, कलम गहयौ नहीं हाथ ।"

कबीर ने सन् 1518 को काशी के पास मगहर में देहत्याग किया। उनकी जन्म की भांति मृत्यु तिथि एवं घटना को लेकर भी मतभेद है। उनकी मृत्यु को लेकर ऐसी मान्यता है कि मृत्यु के बाद उनके शव का अंतिम संस्कार हिंदू रीति से होना चाहिए था या मुस्लिम रीति से। इस विवाद के चलते जब उनके शव पर से चादर हटाई गई तो उनका शव नहीं, बल्कि कुछ फूल मात्र ही पड़े हुए थे। उसके फलस्वरुप कुछ फूलों को हिंदुओं ने तथा कुछ फूलों को मुस्लिम धर्म के लोगों ने अपने–अपने रीति–रिवाजों के अनुसार फूलों का ही अंतिम संस्कार किया।

कबीरदास की ईश्वरीय भक्ति–

कबीरदास की धारणा थी कि संसार में सभी मानव एक ही ईश्वर के संतान हैं हिंदू तथा मुसलमानों की एकता पर भी बल दिया और धर्म के आधार पर हो रहे भेद–भाव तथा दंगों का पुरजोर विरोध किया। उनका कहना यह था कि ईश्वर हमारे कण–कण तथा हमारे अंतरात्मा में ही समाहित है, परंतु हम मनुष्य उसे तीर्थों, मंदिरों और मस्जिदों आदि में खोजते–फिरते हैं।

"कस्तूरी कुण्डल बसै, मृग ढूंढे बन मांहि।

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

एसै घटि–घटि राम है, दुनिया देखे मांहि।।1

कबीरदास जी कहते हैं कि हिरण कस्तूरी की खुशबू को जंगल जंगल ढूंढता फिरता रहता है, जबकि वह खुशबू अपनी ही नाभि में से निकलती है, पर वह यह कभी जान ही नहीं पाता ।

कबीरदास का सामाजिक प्रेम तथा अहंकार का त्याग–

कबीरदास जी ने सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिए प्रेम को प्रधान तत्व मानतेहैं। प्रेम के माध्यम से ही सामाजिक बुराइयों को दूर किया जा सकता है। जिस मानव में प्रेम, दया, करुणा है, वही सबसे बड़ा पंडित है–

"पोथी पढ़–पढ़ जग मुआ, पंडित भया न कोई।

ढाई अक्षर प्रेम का, पढ़ै सो पंडित होय।।"2

कबीरदास जी का मानना था कि बड़े–बड़े धार्मिक ग्रंथो,पुस्तकों का ज्ञान रखनेवाला कोई सच्चा पंडित या विद्वान हो यह आवश्यक नहीं है, क्योंकि ज्ञान से मनुष्य को अहंकार त्याग देना चाहिए, लेकिन यदि कोई मनुष्य प्रेम को जान लेता है, वही सच्चा ज्ञानी तथा अच्छा मनुष्य होगा। मनुष्य का जन्म एक ही बार होता है, इसलिए उसे अपने जीवन में अच्छे कर्म करने चाहिए।

सामाजिक एवं धार्मिक हिंसा का विरोध

कबीरदास जी ने समाज में व्याप्त सभी प्रकार की हिंसा का पुरजोर विरोध किया है। जो मनुष्य जीवों को खाते हैं, वह मानव नहीं, पशुओं के भांति हैं।

"बकरी पाती खात है, ताकि काढ़ी खाल,

जो नर बकरी खात है, तिनको कौन हवाल।"3

कबीरदास जी कहते हैं कि बकरी हरी पत्तियों को खाती है, फिर भी उसकी खाल उतारी जाती है, तो फिर जो लोग उन को मार कर खा लेते हैं, उनके साथ क्या करना चाहिए।

राम रहीम की एकता का प्रतिपादन

कबीरदास जी चाहते थे कि हिंदू– मुसलमान प्रेम एवं भाईचारे की भावना से एक साथ मिल कर रहें। उन्होंने राम और रहीम की एकता स्थापित करते हुए कहा कि ईश्वर दोनों में हीं हो सकते, यह तो लोगों का भ्रम है और खुदा को परमात्मा से अलग मानते हैं।

" दुई जगदीश कहांते आया।

कहु कौने भरमाय।।"4

मुसलमानो की भांति उन्होंने मूर्ति–पूजा का खंडन किया, एकेश्वरवाद को मान्यता दी और अवतारवाद का विरोध किया।

जातिप्रथा का खंडन

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

कबीरदास की भक्ति और समाज सुधार का उद्देश्य जनता को सामाजिक उपदेश देना और उसे सही रास्ता दिखाना है।उन्होंने जो गलत समझा उसका निर्भीकता से खंडनकिया। अनुभूति की सच्चाई और अभिव्यक्त की ईमानदारी कबीर की सबसे बड़ी विशेषता है। कबीरदास ने समाज में व्याप्त जाति–प्रथा छुआछूत एवं ऊंच– नीच की भावना पर प्रहार करते हुए कहा की जन्म के आधार पर कोई ऊंचा– नीचा नहीं होता। ऊंचा वह है जिसके अच्छे कर्म है–

" ऊंचे कुल का जनमिया करनी ऊंच न होय।

सुवरन कलश सुरा भरा साधु निंदत सोय।।"5

धार्मिक पाखंड का खण्डन

कबीरदास जी कहते हैं कि ईश्वर तो संसार के कण–कण में समाहित है तो पत्थर से निर्मित मूर्ति पूजा करने से ही ईश्वर की प्राप्ति कैसे हो सकती है यदि ऐसा है तो पत्थर से निर्मित घर की चक्की की पूजा की पूज करनी चाहिए जिसमें पिसा अनाज लोगों का पेटभरता है, उसकी पूजा से भी ईश्वर की प्राप्ति हो सकती है।

"कबीर पाहन पूजे हरि मिलै, तो मैं पूजूं पहार।

घर की चाकी क्यों नाहिं पूजै, पीसखाए संसार।6

कबीरदास जी समाज में व्याप्त धार्मिक पाखंडवाद पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं कि हिंदू माला जपते तथा तिलक लगाते हैं तथा दाढ़ी उगाने से कैसे ईश्वर के भक्त बन जाते हैं। भक्ति के लिए तो मन पवित्र होना चाहिए।

"माला तिलक लगाई के, भक्ति न आई हाथ

दाढ़ी मूंछ मुराय कै, चलै दुनी के साथ

दाढ़ी मूंछ मुराय कै हुआ, घोटम घोट

मन को क्यों नहीं मूरिये, जामै भारिया खोट।"

कबीरदास जी मुस्लिम धर्म के पाखंड पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं कि समझ में नहीं आता है कि आवाज देकर चिल्लाने से कैसे ईश्वर की प्राप्त होती है।वह कहते हैं कि धर्म का संबंध तो सत्य से जोड़कर असत्य का निषेध करना है

" कांकर पाथर जोरि के, मस्जिद लई बनाए,

ता चढ़ा मुल्ला बांग दे, क्या बहिरा हुआ खुदाय।"

कबीरदास ने हिंदू और मुसलमान दोनों को फटकारते हुए कहते हैं की एक और हिंदुओं के तीर्थाटन, छापा, तिलक का विरोध करते हैं, तो दूसरी ओर रोजा, न माज, अजान का। वे कहते हैं कि माला फेरने से नहीं, बल्कि मन की शुद्धि से ईश्वर प्रसन्न होता है।

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

" माला फेरत जुग गया,गया न मन का फेर।

करका मनका डारि कै, मनका मनका फेर।।

कबीरपढ़े–लिखे न थे, किंतु उनमें अनुभूति की सच्चाई एवं अभिव्यक्ति का खारापन विद्यमान था।वे अनुभव जन्य सत्य पर विश्वास करते हैं,न की शास्त्रोक्त बातों पर। शास्त्र के पंडित को वे चुनौती देते हुए कहते हैं–

तू कहता कागद की लेखी, मैं कहता आंखिन की देखी।

मैं कहता सुरझावनहारी, तू राखा उरझोय रे।।

जीव हिंसा का विरोध

कबीरदास ने धर्म के नाम पर व्याप्त जीव– हिंसा का विरोध किया है हिंदुओं में शाक्तों और मुसलमानो में कुर्बानी देने वालों का उन्होंने निर्भीकता से विरोध किया है और कहा है कि दिन में ईश्वर की पूजा करते हैं और रात में इसी धर्म के पालन में जीव हत्या करते हैं।ऐसी स्थिति में ईश्वर कैसे प्रसन्न हो सकता है–

"दिन में रोजा रहत हैं, रात हनत हैं गाय।

यह तौ खून वह बंदगी, कैसे खुशी खुदाय।।

कबीरदास जी कहते हैं कि जो मनुष्य जीवों को खाते हैं, वह मनुष्य मानव नहीं,पशुओं से भी बदतर है।

"बकरी पाती खात हैं, ताकि काढ़ी खाल,

जो नर बकरी खात हैं, तिनको कौन हवाल ।।

कबीरदास जी कहते हैं की बकरियां हरी पत्तियों को खाती हैं फिर भी उनकी खाल उतारी जाती है तो जो मानव उनको मार कर खा लेते हैं उनके साथ क्या करना चाहिए।

कबीरदास जी का सामाजिक व्यवस्था के प्रति दृष्टिकोण

प्रत्येक समाजकी अपनी संस्कृति होती है, जो अपनी ही रीतियों एवं विश्वासों पर आधारित होती है। लोकजीवन में लोकविश्वासों और लोकमान्यताओं की विशेष महत्वहै। जिस जाति का सांस्कृतिक आधार जितना पुराना होगा उसमें प्रचलित कुकृत्यों के लिए नरक की प्राप्ति होती है। संसार में वह मनुष्य ही इस नर्क से मुक्तिप्राप्त कर सकते हैं, जो ईश्वर की आराधना करते हैं, उसके नाम का स्मरण करते हैं–

कहै कबीर दोउ गये नरक महं,

जिन हरदम राम न जाना।।

©IJARMS JOURNAL, 2024

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

भारतीय समाज में सामान्यतः लोगों की मान्यता रही है कि गेरुए वस्त्र पहनकर गले में माला धारण करके तीर्थ स्थानों पर स्नान करके, जप– तप से ईश्वर को प्राप्त किया जाता है, परंतु संत कबीरदास जी ने गेरुए वस्त्र, माला, तीर्थस्थान, तिलक जप–तप आदि को मिथ्या माना है। उन्होंने वस्त्रों के संदर्भमें कहा है कि–

मन न रंगाये, रंगाये जोगी कपड़ा।

आसन मारि मंदिर में बैठे, नाम छांड़ि पूजन लागे पत्थर।

कनवा फडाय जोगी जटवा बढोले, दढ़िया बढ़ाय बनि मैंलै बकरा।।

कबीरदास जी का नारियों के प्रति दृष्टिकोण

कबीरदास जी के दोहों में नारी विषयक चिंतन का सर्वथा अभाव दिखाई पड़ता है, क्योंकि उनकी कविताओं का लक्ष्य ईश्वर महिमा का गायन करना था,नकि नारी विषयक चिंतन प्रस्तुत करना अपितु,उनकी कविताओं में नारी के स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है।कबीरदास जी ने नारी के दो स्वरूपों का संदर्भ दिया है– एक तो कामीनी रूप की, दूसरी सती रूप की। नारी के कामिनी रूप में कबीरदासजी ने नारी केनिंदनीय स्वरूप को चित्रित किया है, क्योंकि उनके दृष्टि में नारी नरक का द्वार है और ईश्वर प्राप्ति में बाधक भी। नारी के संसर्ग से साधकों को ईश्वर की प्राप्त नहीं हो सकती है।

नारी की झाई पड़त, अंधा होत भुजंग।

कबिरा तिनकी कौन गति, जो नित नारी के संग।।

यह कर कर नारी के सहचार्य की आलोचना की है और साधुओं को सचेत करते हुए कहा है।

जोगिया खेलियों बचाय के नारि नैंन चलैंबान।

सिंगी की भिंगी करीडारा, गोरख के लिपटान।

कबीरदासजी जहां एक और कामिनी नारी की कठोरता के साथ भर्त्सना करते हैं,उसे त्याज्य मानते हैं, उसके सहचार्य से दूरी चाहते हैं, वहीं दूसरी तरफ पतिव्रता नारी को भी बड़ा मान –सम्मान प्रदान कर गौरवान्वित करते हैं। पतिव्रता नारी न केवल अपनी पति के ही प्रति अपनी भावनाओं को उद्वेलित करती है,अपितु वह माता बन कर समाज का निर्माण भी करती है। वह अपने सह कर्मों से अपने पुत्रों को समाज की प्रेरणाप्रदान करती है। इतना ही नहीं, वह नाना गुणों से लक्षित होती है।इसलिए नारी के वाह्यरूप की अपेक्षा कबीर ने उनके आंतरिक पक्ष निर्मलता, कोमलता एवं शुद्धता की ओर ध्यान केंद्रित किया है।

कबीर का सामाजिक लोककल्याण की भावना

कबीरदास जी प्रगतिशील चेतना से युक्त एक विद्रोही कवि थे, कवि व्यक्तित्व क्रांतिकारी था। धर्म और समाज के क्षेत्र में व्याप्त पाखंड कुरीतियों, रूढ़ियों, अंधविश्वासों की उन्होंने मुखर आलोचना की

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

और ऊंच–नीच, छुआछूत जैसे सामाजिक कोढ़ को दूर करने के लिए भरसक प्रयास किया।यह सच है कि कबीर का मुख्य स्वर विद्रोह का था, परंतु वे मुल्यहीन विद्रोही नहीं थे। वे भक्त, कवि, समाज–सुधारक, लोकनेता सब एकसाथ थे। कबीरदास ने प्रत्येक व्यक्ति के लिए धर्म और उपासना के दरवाजे खोल दिए। इसलिए कबीरदास ने निर्गुण उपासना पर जोर देते हुए कहा है–

"जैसे तिल में तेल है, ज्यों चकमक में आग।

तेरा साईं तुझमें, तु जाग सके तो जाग।

कबीरदास जी संपूर्ण जगत को एक ही परिवार मानते थे वे समाज सुधार के लिए संसार को विनम्रता, दया, ज्ञान को महत्वपूर्ण मानते हैं। जीवन में दया तथा विनम्रता से बड़ा कोई भी गुण नहीं है। यदि आपके पास सारी दुनिया की दौलत होने के बाद भी अगर आपके पास विनम्रता की दौलत न हो,तो सम्मान और यश प्राप्त नहीं होता है। वह जीवन में दया तथा वाणी के माध्यम से संसार में विनम्रता का संदेश देते हैं, समाज को एक नई दिशा दिखाते हैं जिससे मानव अपने स्वार्थ, अहंकार, भेद– भाव की भावना सांसारिक मोह–माया, मानवीय दोषों का परित्याग करके एक पवित्र आत्मा बन सके। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि हमें उन लोगों से मित्रता नहीं रखनी चाहिए, जो छिद्रोन्वेषी होते हैं। कपटी लोगों से अपने आपको दूर रखना चाहिए। कबीरदास समाज को एक संशोधित रूप में देखना चाहते थे। कबीरदास जी समाज में धार्मिक सद्भावना और सांप्रदायिक सौहार्द स्थापित करने पर बल देते हैं। वे पूजा, जप, माला, छापा, तिलक केश, मुंडन, व्रत, उपवास, तीर्थ–यात्रा, मूर्ति– पूजा को निरर्थक मानते हैं।वे कहते हैं कि यह सभी कुरीतियां मानव की पथ–भ्रष्ट का माध्यम हैं। वे समस्त विचारों और वाह्य विचारों की स्पष्ट शब्दों में कठोर आलोचना एवं विरोध करते हैं। उन्होंने समाज में सत्य, प्रेम का भंडार, अज्ञान तथा घृणा, भेद–भाव, का प्रयास किया है, वे समाज को धर्म के नाम पर व्याप्त पाखंड, अंधविश्वास, जाति प्रथा का खंडन किया है। कबीर समाज को प्रेम की धारा तथा एक नई दिशा देने मूर्ति पूजा आदि का विरोध किया है। वे अपने युग के महान दार्शनिक थे, उनके लिखे दोहा आज के आधुनिक युग में भी प्रासंगिक हैं। संत कबीरदास जी का संपूर्ण साहित्य समाज को एक सही पथ दिखाकर उसपर चलने की प्रेरणा देता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ–

1– श्यामसुंदर दास, कबीर ग्रंथावली, पृष्ठ–112
2– कबीरदास, बीजक, पृष्ठ–388
3– आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ–65–72
4– सरस्वती पांडेय, हिंदी साहित्य का वस्तुनिष्ठ इतिहास, पृष्ठ–101–104
5– डॉ नगेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ – 67–69
6– माता प्रसाद तिवारी , कबीर ग्रंथावली, पृष्ठ–65